बाल जीवनी माला
डारविन — अशोक घोष
आइजक न्यूटन — ओमप्रकाश आर्य
शरतचन्द्र — विष्णु प्रभाकर
रामानुजन — डा. वजीर हसन आब्दी
जगदीशचन्द्र वसु — सुभाष मुखोपाध्याय
मिर्ज़ा गालिब — रज़िया सज्जाद ज़हीर
निराला — डा. रामविलास शर्मा
आर्किमीडिज़ — गुणाकर मुले
भास्कराचार्य — गुणाकर मुले
सी. वी रामन — विश्वमित्र शर्मा
एडिसन — शंकरलाल पारीक
वाल्तेयर — देवीप्रसाद
प्रफुल्लचन्द्र राय — राजीव सक्सेना
मादाम क्यूरी — गीता बन्दोपाध्याय
गेलीलियो — ओमप्रकाश आर्य
पास्कल — गुणाकर मुले
आइंस्टाइन — युगजीत नवलपुरी
केपलर — गुणाकर मुले
राहुल सांकृत्यायन — भदन्त आनन्द कौसल्यायन
बंकिमचन्द्र — विष्णु प्रभाकर
प्रेमचन्द — नागार्जुन
कॉपर्निकस — डा. वजीर हसन आब्दी
लुई पास्चर — शंकरलाल पारीक
मेंडेलीफ — गुणाकर मुले
प्रत्येक का मूल्य ३ रुपये ५० पैसे
बाल जीवनी माला
सी. वी. रामन
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस

बाल जीवनी माला

सी. वी. रामन

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
रानी झांसी रोड, नई दिल्ली

पहला हिन्दी संस्करण १९६०
दूसरा हिन्दी संस्करण १९६४
तीसरा हिन्दी संस्करण १९७९

लेखक
विश्वमित्र शर्मा

मूल्य : ३ रुपये ५० नये पैसे

जितेन सेन द्वारा न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली में मुद्रित और उन्हीं के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस(प्रा०) लिमिटेड नई दिल्ली की तरफ से प्रकाशित ।

सी. वी. रामन
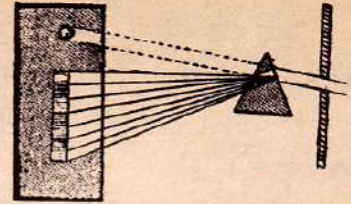
नाम...

दुनिया के कोने-कोने में फैला नाम !

कौन नहीं चाहता कि दुनिया भर में नाम फैल जाय ? पर जानते हो, चाहने से ही नाम नहीं फैलता ? नाम फैलता है काम करने से ।

तुम देखोगे कि दुनिया में जिन लोगों का नाम फैला उन्होंने बेहद मेहनत की । मेहनत ही नहीं की, पागलों की तरह अपने काम की धुन में लगे रहे ।

पुरानी बातों की दुहाई देने से ही कोई बड़ा नहीं बनता । किसी नयी बात की खोज की जाती है तो बहुत से लोग यह कहते हैं—अरे यह तो हमारी किताब में लिखा है । पर किताब में लिखा होने से क्या होगा जब तक कि आप उसे कार्यरूप में बदल नहीं देते ?

बात कह देने से हथेली पर कभी सरसों नहीं जमी। जीवन में बहुत मेहनत-मशक्कत करनी पड़ती है, और दुनिया उसी का लोहा मानती है जो कुछ कर दिखाता है।

फ्रांस के महान लेखक वाल्तेयर का नाम तुमने सुना होगा। उन्हें देश छोड़ना पड़ा, जेल के सीखचों के पीछे बन्द होना पड़ा, और न जाने किन-किन बातों का सामना करना पड़ा। पर वह अपनी धुन से नहीं हटे। उस समय क्या उन्होंने सोचा था कि उनका नाम दुनिया भर में फैल जायगा? नहीं!

एडिसन को लो। बालक एडिसन के बारे में लोग सोचते थे कि वह कुछ कर ही न सकेगा। पर करते-करते इतना काम कर गया जिसकी कोई आशा तक नहीं कर सकता था।

और लेनिन का नाम तो तुमने सुना ही है! रूस के जार ने कभी टिकने ही नहीं दिया लेनिन को अपने घर में, क्योंकि वह चाहते थे कि जार के अत्याचार बन्द हों और गरीब मजदूर-किसान आगे बढ़ें, सुख की सांस लें। और आज वही लेनिन गरीबों के, किसानों के, दुखियों के, देवता हैं।

लिंकन तो साधारण लकड़हारे के घर पैदा हुए थे—उनका नाम भी तुम जानते हो।

इसी तरह मुंशी प्रेमचंद और आचार्य जगदीशचंद्र बसु के नाम हैं। मुंशी प्रेमचंद गरीब थे और सारी उमर गरीब रहे। पर वह जो कुछ कर गये, उसी ने उन्हें अमर बना दिया। आज कौन नहीं जानता कि वह इस युग के महान लेखक थे।

जगदीशचंद्र बसु ने भी अपनी धुन के बल पर पौधों के सम्बंध में नयी खोजें कीं।

आज रामन का नाम भी उनके कामों से है। बचपन से उन्होंने अपने दिल में विज्ञान की जो जोत जगायी उसी का प्रकाश आज चारों दिशाओं में फैल रहा है।

: दो :

स्कूलों, दफ्तरों, दूकानों आदि में छुट्टी हो जाती है तो लोग साइकिलों से, बसों से, तांगों से, या ट्रामों से अपने घरों की ओर भागते हैं। उन्हें जल्दी होती है कि घर चलें, आराम करें और दिन भर की थकान उतारें।

बहुत पुरानी बात है...

कलकत्ता में काम करने वाला एक सरकारी अफसर दफ्तर से छुट्टी के बाद ट्राम में घर जा रहा था। पर यह क्या ! वह ट्राम से कूद क्यों गया ? उसे तो स्यालदा तक ट्राम में ही जाना था; स्यालदा में उसका घर था।

वह ट्राम कंडक्टर तो था नहीं, जो टिकट चेक करने चढ़ा हो और काम करके बीच में ही, जहां जी आया, उतर गया। उस अफसर को इतना अनाड़ी भी नहीं कह सकते कि मटरगश्ती करने के इरादे से बीच में ही उतर पड़ा हो।

ट्राम खट-खट करती चलती है। पर कलकत्ता की ट्राम में खट-खट का खटराग नहीं। वह दिल्ली की ट्राम सी छकड़ा मेल भी नहीं कि जहां जी चाहा उतर लिये। वह थी हिन्दुस्तान भर में मशहूर ट्राम, कलकत्ता की ट्राम।

तो क्या हुआ—ट्राम या बस में यात्रियों को गपबाजी या अपने अड़ोसी-पड़ोसी की चुगलखोरी से ही फुर्सत नहीं मिलती। कोई दिन भर के काम की शिकायत करता है तो कोई अफसरों के सख्त मिजाज का रोना-रोता है। पर यह क्या ! यहां तो यही मालूम देता है कि वह अफसर अपने ही ध्यान में मगन चला जा रहा है—और उसके ध्यान की डोर कहीं दूर, बहुत दूर बंधी हुई है और उस डोर का जब एक सिरा नजर आता है तो वह उसी से खिंचा नीचे उतर जाता है। उस समय उसे न दिन भर की थकावट का ध्यान रहता है और न घर जाकर आराम करने का—उड़कर घर पहुंचने का।

बात यह हुई कि उस अफसर ने एक बोर्ड देखा...

पर यह बोर्ड किसी हलवाई या 'रोशगोल्ला' वाले की दुकान का न था, न खेल-खिलौने की दुकान का कि बच्चों के लिए गुड्डा-गुड़िया ही लेते चलें।

तो भारत सरकार का यह बड़ा अफसर बीच मे ही क्यों उतर पड़ा ?

मैंने अभी कहा न कि जो अपने ध्यान में मगन होता है, वह सब-कुछ भूल जाता है। उसे ध्यान रहता है केवल अपने लक्ष्य का। इधर-उधर की दुनिया की बातें उसका ध्यान अपनी ओर नहीं खींचतीं। उसे तो अर्जुन की तरह एक बड़े से पेड़ पर बैठी चिड़िया की आंख की पुतली, यानी अपना लक्ष्य ही दिखाई देता है। याद है न तुम्हें अर्जुन की वह बात ?

लो, लगे हाथ बताता ही चलूं।

पाण्डव और कौरव गुरु द्रोणाचार्य से धनुर्विद्या सीखते थे। यह विद्या सीखते जब उन्हें बहुत दिन हो गये, तो द्रोणाचार्य ने एक दिन उनकी परीक्षा ली। एक पेड़ पर एक नकली चिड़िया बैठा दी, और अपने शिष्यों से उसकी आंख में निशाना लगाने को कहा। बारी-बारी से शिष्य आते और गुरु उनसे पूछते :

"निशाने के लिए तैयार हो न ?"

"हां, हैं, गुरुदेव !"

"क्या दीखता है ?"

"पेड़ भी दीखता है—उस पर बैठी चिड़िया भी।"

"तो रख दो धनुष-वाण।"

सबने यही कहा। आखिर जब अर्जुन आये तो गुरु ने फिर वही प्रश्न पूछा। पर अर्जुन का उत्तर था :

"मुझे तो केवल आंख की वह पुतली दीखती है जिसमें निशाना लगाना है।"

बस वही बात यहां थी। यह अफसर और कोई नहीं, आज की हमारी कहानी के नायक श्री चंद्रशेखर वेंकट रामन थे—उस समय की भारत सरकार के डिप्टी अकाउण्टेण्ट जनरल।

बात यह थी कि रामन को विज्ञान से इतना लगाव था कि वह सोते-जागते, खाते-पीते सदा उसी के ध्यान में मगन रहते थे। अब तक उन्हें ऐसी जगह नहीं मिली थी जहां बैठकर वह विज्ञान के प्रयोग कर सकें। पर आज उन्हें वह जगह मिल गयी; इसीलिए उन्हें यह ध्यान न रहा कि घर भी पहुंचना है।

आर्कीमिदीज का नाम शायद तुमने सुना होगा। वह प्राचीन काल के एक महान वैज्ञानिक थे। वह इसी तरह कई दिनों से एक समस्या में उलझे हुए थे। एक दिन वह नहा रहे थे। जब वह कपड़े उतारकर टब में घुसे तो टब का कुछ पानी बाहर निकल गया। बस,

उनकी समस्या का हल भी निकल आया। वह अपने ध्यान में इतने डूबे थे कि वहीं से खुशी में 'पा गया, पा गया' चिल्लाते हुए भागे। उन्हें यह भी ध्यान न रहा कि मैं निर्वस्त्र हूं, तन पर एक लंगोटी भी नहीं है।

रामन ने वह बोर्ड देखा—जिस पर लिखा था : 'भारतीय विज्ञान परिषद्'। हां, तो ट्राम से कूदते समय श्री रामन के मुँह से भी 'पा गया, पा गया' शब्द जरूर निकले होंगे। बात ही ऐसी थी। उनकी रुचि तो थी विज्ञान की ओर, पर सहूलियत न मिलने के कारण वह आ फंसे थे रुपये-पैसे के हिसाब के चक्कर में। पर इतने साल नौकरी करने पर भी विज्ञान का नशा उनके सिर से न उतरा था। सचमुच ऐसे आदमी कम ही होते हैं जो सालों दिल में एक साध संजोये रखते हैं, एक जोत जगाये रखते हैं और जब तक सफलता नहीं मिल जाती, तब तक उसी पर ध्यान टिकाये रहते हैं। अंत में वे सफलता के स्वर्ण मंदिर में पहुंचकर ही दम लेते हैं।

: तीन :

यह भी कम हैरानी की बात नहीं कि मौका न मिलने पर रामन अकाउण्टेण्ट बन गये। फिर दस साल के अरसे को भी देखो! सचमुच कितना लम्बा अरसा है। आदमी सुबह का खाया शाम को भूल जाता है, नौकरी के चक्कर में पड़कर कोल्हू का बैल बन जाता है। बैल की आंख पर पट्टी बंधी रहती है। वह गोल घेरे में घूमता रहता है, घूमता रहता है—उसे किसी और बात से कुछ मतलब नहीं रहता।

इसी तरह आज के लोग, साधारण लोग, सुबह दफ्तर जाते हैं और शाम को लौट आते हैं। उन्हें इस चक्कर के अलावा कुछ याद ही नहीं रहता, दूसरा कोई ध्यान ही नहीं रहता। पर रामन एक ऊंचे ओहदे पर दस साल रहकर भी अपने असली ध्येय को न भूले, न भूले। उन्हें आराम भी था और रुपया-पैसा भी मिल रहा था! पर नहीं, उन्हें विज्ञान जगत में कुछ करना

था। इसीलिए वह मौके की ताक में रहते थे और अब जैसे ही मौका हाथ आया, लपककर उसे पकड़ लिया।

सचमुच यही बड़ी बात थी, बहुत बड़ी। यदि रामन नौकरी के चक्कर और रुपये-पैसे के फेर में पड़कर अपने असली ध्येय को भूल जाते, तो उन्हें कौन याद करता? आज जितना बड़ा काम वह कर रहे हैं, या जो कुछ उन्होंने किया, वह शायद किसी और के जरिये होता—और उस सरकारी अफसर रामन को कोई याद भी न करता।

तो आओ, हम शुरू से उस कहानी का तार पकड़ें। बीच-बीच में से कहानी तो मैं कह दूं, पर तुम्हें मजा न आयेगा। इसलिए कहानी कहने का मैं वही पुराना तरीका अपना रहा हूं जो मेरी दादी-नानी ने अपनाया था।

: चार :

भारत का एक नगर—

त्रिचनापल्ली।

दक्षिण प्रदेश मद्रास का प्रसिद्ध नगर त्रिचनापल्ली —और वहां की पहाड़ी पर बना मंदिर।

इसी त्रिचनापल्ली में सात नवम्बर १८८८ को रामन का जन्म हुआ।

रामन तो ब्राह्मण परिवार के हैं। उनके पूर्वज खेती-बारी का, जमींदारी का काम करते थे। तंजोर जिले के अय्यमपेट के पास के गांव इनकी जमींदारी में थे।

अपना गांव क्यों छोड़ें? भले ही वहां भूखों मरना पड़े! भले ही वहां बीमारी में सड़-घुलकर जीवन से हाथ धोने पड़ें!

भारत के बहुत से लोग आज भी दूर-दूर के गाँवों में इसीलिए पड़े हैं। उन्होंने रेलगाड़ी तक के दर्शन

नहीं किये। पर रामन के पिता ने दकियानूसी विचारों को लात मार दी और उन्नति की राह की खोज में निकल पड़े। वह अपने परिवार में पहले आदमी थे जिन्होंने अपनी और अपने बच्चों की भलाई के लिए अपना गांव छोड़ा और अंग्रेजी पढ़ने लगे।

बालक रामन ने जब इस लम्बी-चौड़ी दुनिया में आंखें खोलीं तो उस समय उनके पिता त्रिचनापल्ली के एक स्कूल में मास्टर थे। मास्टरी करने के साथ ही वह प्राइवेट बी. ए. की तैयारी भी कर रहे थे। बी. ए. कर लेने पर वहीं के एक कालेज में पढ़ाने लगे। रामन के पिता भौतिक विज्ञान और गणित के अच्छे विद्वान थे।

और संगीत ?

संगीत तो दक्षिण की खास देन है। रामन के पिता वीणा बजाने में भी बहुत कुशल थे।

जिन खोजा तिन पाइयां। रामन के पिता ने अपना गांव जिस चीज की खोज में छोड़ा था, उसे पा लिया।

और श्रीमती पार्वती अम्मल !

यही रामन की माता थीं—एक अच्छे पढ़े-लिखे

परिवार की कन्या। परिवार वालों में पढ़ने की अनोखी धुन थी। एक बार अम्मल के पिता को न्यायशास्त्र पढ़ने की धुन सवार हुई। सोचो, कहां बंगाल और कहां मद्रास का त्रिचनापल्ली। बस चल पड़े पैदल, और जा पहुंचे एक बंगाली न्यायशास्त्री के पास। न्यायशास्त्री शहर के कोलाहल से दूर, एक छोटे से गांव के एकान्त कोने में, अपने ही खर्च पर विद्यार्थियों को न्यायशास्त्र पढ़ाते थे।

उन दिनों बंगाल न्यायशास्त्र के विद्वानों का गढ़ था और भारत के कोने-कोने से विद्यार्थी वहां पहुँचते थे। विद्यार्थी अक्सर वहीं रहते और विद्याध्ययन करते। गुरु-पत्नी उनके लिए भात रांध देती और विद्यार्थी उसी से संतुष्ट रहते।

ऐसा था उन दिनों पढ़ने-पढ़ाने का ढंग !

रामन की माता साहस और दृढ़-निश्चय की पुतली थीं। एक बार जो काम आरम्भ कर देतीं उसे पूरा करके ही छोड़तीं। ऐसी कोई शक्ति न थी जो उन्हें रोक पाती। उन्होंने कोई काम अधूरा नहीं छोड़ा।

इस प्रकार बालक रामन को साहस, लगन और ज्ञान प्राप्त करने के गुण माता-पिता से मिले। पिता

से जहां उन्होंने विज्ञान के प्रति रुचि प्राप्त की, वहां अपनी स्नेहमयी मां की गोद में ही साहस और लगन का पहला सबक सीखा और ऐसा सीखा जो आज तक नहीं भूले।

रामन आज भी दीन-दुनिया के कोलाहल से दूर, बड़ी तत्परता से अपने उसी कार्य की पूर्ति में लगे हैं जो अपने लिए उन्होंने बचपन से निश्चित कर लिया था।

: पांच :

स्कूल।

पुत्र छात्र और पिता अध्यापक।

जिस समय बालक रामन को स्कूल भेजा गया उस समय उनके पिता विजगापट्टम के वाल्तेयर कालेज में अध्यापक थे। एक तो घर भर की शिक्षा में रुचि, दूसरे विजगापट्टम स्थान। वहां का एक समुद्री किनारा और मनोरम वातावरण। पढ़ने को खुद-ब-खुद मन करे।

प्रिंसिपल आयंगर अंग्रेजी पढ़ाते थे और रामन के पिता गणित और भौतिक विज्ञान। दोनों के पास रहकर बालक रामन खूब मन लगाकर पढ़ने लगा। कुछ लोग इस जमाने में भी कहते सुने जाते हैं: 'पढ़ोगे-लिखोगे होगे खराब, खेलोगे-कूदोगे बनोगे नवाब।' खैर, अब तो वैसे ही नवाबी के दिन लद गये, पर वे बालक भी कितने भाग्यहीन हैं जो अवसर मिलने पर भी ठीक से नहीं पढ़ पाते।

रामन्न ने आयंगर साहब से बढ़िया अंग्रेजी सीखने की प्रेरणा ली और अपने पिता के कारण उनका झुकाव विज्ञान की ओर हुआ। फल यह हुआ कि हाई स्कूल तक पहुंचते-पहुंचते रामन ने अंग्रेजी का खूब अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया; साथ ही विज्ञान के कई बड़े-बड़े पोथे भी पढ़ डाले। रामन विज्ञान की सरिता में इतना डूबे रहने लगे कि उन्हें अपने शरीर की सुध-बुध भी न रहती। न खाने का वक्त, न टहलने का, न ठीक से सोने का। और इसका फल यह हुआ...

क्या ?

यही कि स्वास्थ्य खराब होने लगा।

दरअसल, 'खेलोगे-कूदोगे बनोगे नवाब' का यह मतलब तो नहीं कि पढ़ना-लिखना भूलकर खेल के ही पीछे पड़ जाओ; पर इसका मतलब यह भी नहीं कि स्वास्थ्य का ध्यान ही न रखो। खैर, स्वास्थ्य खराब होने के कारण रामन को कुछ समय के लिए पढ़ाई छोड़ देनी पड़ी; परन्तु पढ़ाई छोड़ देने के बावजूद रामन ने १२ वर्ष की उम्र में मैट्रिक परीक्षा पास कर ली। परीक्षा पास की बहुत सम्मानपूर्वक।

विज्ञान का चस्का इतना लग चुका था कि बीमारी के दिनों में ही बार-बार नये परीक्षण करने,

चीजों को देखने-समझने, की इच्छा होती रही। एक बार तो बीमारी की हालत में ही रामन ने परीक्षण करने की जिद पकड़ ली। मैट्रिक पास कर लेने के बाद तो कई सफल परीक्षण भी कर डाले।

पर यह क्या ? विज्ञान से रुचि हट गयी और एकदम धार्मिक ग्रन्थों को पढ़ना शुरू कर दिया।

बात यह हुई कि पिता सारे दिन कालेज में पढ़ाने के काम में लगे रहते। उन दिनों श्रीमती एनी बेसेण्ट ने भारत में एक नई धार्मिक भावना की लहर चलायी जिससे अनेक बड़े-बड़े आदमी प्रभावित हुए।

इन्हीं एनी बेसेण्ट के लेख पढ़कर और भाषण सुनकर रामन भी विज्ञान को भूलकर धार्मिक विषयों की ओर झुके। रामायण-महाभारत तथा अन्य अनेक पुस्तकें इतनी अच्छी तरह और ध्यानपूर्वक पढ़ीं कि इनके सम्बंध में जो कुछ उस छोटी सी आयु में लिखा उसका भी सम्मान हुआ। इनके एक निबंध पर तो एक बार पुरस्कार भी मिला। और यही वजह हुई कि मैट्रिक के बाद जब एफ. ए. पास किया तो उसमें विज्ञान का विषय नहीं लिया। पर एफ. ए. पास किया प्रथम श्रेणी में।

धार्मिक ग्रन्थों का नशा जल्द ही उतर गया।

१९०३ का जनवरी महीना।

बी. ए. के लिए मद्रास के प्रेसीडेंसी कालेज में नाम लिखवाया। घर वाले और दूसरे सम्बंधी रामन की योग्यता और हर विषय को समझने और ग्रहण करने की उनकी असाधारण प्रतिभा को देखकर जानते हो क्या चाहते थे ? वे चाहते थे कि रामन पढ़-लिखकर कोई ऊंची सरकारी नौकरी करे, ऊंचे ओहदे पर पहुंचे, बड़ा अफसर कहलाये। इसलिए वे कहने लगे कि बी. ए. में इतिहास आदि आसान विषय लिये जायें जिससे बड़ी नौकरियों के लिए जो प्रतियोगिता हो, उसमें खूब नंबर मिलें।

परन्तु नहीं। रामन में फिर विज्ञान-प्रेम जाग उठा था। रामन ने उन सबकी बात मानने से इन्कार कर दिया और सम्बंधियों से साफ-साफ कह दिया : मैं वही विषय पढ़ूंगा, जो मुझे सबसे अधिक भाता है, और जिसमें मेरी सबसे अधिक रुचि है। और छोटे से—१३-१४ वर्ष के—रामन ने इतिहास आदि सरल विषय छोड़कर फिर विज्ञान की कठिन शिक्षा प्राप्त करनी आरंभ की।

: छ :

बी. ए. के छात्र अपने कमरे में बैठे थे। इतने में अंग्रेजी पढ़ाने वाले अध्यापक श्री इलियट आये। उन्होंने अपने शिष्यों पर नजर डाली—और उनकी आंखें एक छात्र पर जा टिकीं। बहुत ही पतला-दुबला था वह और था भी नाटा-सा। पतला-दुबला तो था, पर उसकी उम्र भी तो कुछ न थी—यही १३-१४ वर्ष।

अध्यापक ने समझा कोई लड़का भूलकर इस ऊंची कक्षा में आ बैठा है। टोक ही तो दिया उसे। पूछा :

"क्या तुम इसी कक्षा के छात्र हो ?"

"जी, इसी कक्षा का हूं।"

"क्या तुमने एफ. ए. पास कर लिया है ?"

"जी, पास कर लिया है।"

"कहां से ?"

"वाल्तेयर कालेज से।"

"तुम्हारी उम्र क्या है ?"

"यही १४ साल।"

"अच्छा ? और तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मेरा नाम चन्द्रशेखर वेंकट रामन है।"

सभी छात्रों का ध्यान रामन पर था। सबने देखा रामन पतला-दुबला भले ही है, पर उसके मुख पर एक तेज है, साहस है, और निडरता की झलक है, एक विशेष प्रकार की चमक है।

इसी प्रकार एक दिन प्रिंसिपल साहब रामन की कक्षा में आये। उनका नाम था नाना साहब। नाना साहब उस बालक को बी. ए. की कक्षा में बैठा देखकर बहुत हैरान हुए। पर, जब उन्होंने रामन से बात की, तो उन्हें विश्वास हो गया कि वह इस कक्षा का विद्यार्थी ही नहीं है, वरन अन्य छात्रों की अपेक्षा उसे ज्ञान भी अधिक है। उन्हें तो बहुत ही प्रसन्नता हुई। तब से सभी प्रोफेसर और प्रिंसिपल रामन पर बहुत ध्यान देने लगे।

अब क्या था ! पिछले दो वर्ष रामन ने विज्ञान पढ़ा था—वह भूख अब जागी और रामन दिन-रात विज्ञान पढ़ने में जुटे रहते। कक्षा में जितने प्रयोग

पूरे साल भर में करवाये जाने थे, वे रामन ने कुछ ही दिनों में क़र डाले। अब इच्छा यह होती थी कि और आगे प्रयोग और परीक्षण किये जायें। पर कालेज में इसकी सुविधा न थी। यह बात रामन के दिल को रह-रहकर बुरी लगती थी। पर जिनको किसी काम की धुन होती है वे कभी हताश नहीं होते। इस-लिए जब भी मौका मिलता, रामन नये परीक्षणों और प्रयोगों में लग जाते।

प्रिंसिपल नाना साहब अपने शिष्य की प्रतिभा को सहज ही पहचान गये। उन्होंने देखा कि रामन को कक्षा में कराये जाने वाले कुछ थोड़े से प्रयोगों में लिप-टाये रखना, उसके साथ अन्याय करना होगा। इससे उसका विकास रुक जायेगा। इसलिए उन्होंने रामन को ऐसे प्रयोगों से छुट्टी-सी दे दी, क्योंकि ये प्रयोग रामन के लिए पुराने पड़ चुके थे, साधारण मालूम होते थे। नाना साहब ने पुराने प्रयोगों से छुट्टी ही नहीं दे दी, वरन नये प्रयोग और स्वाध्याय करने में सुविधा और सहायता भी दी।

और आज के लड़के ! जरा मिलान तो करो। पढ़ेंगे तो कुंजियां और नोट लेकर और साल भर पढ़ाई से जी चुराते रहेंगे या दूसरी तमाशबीनी के कामों में लगे रहेंगे।

और जब बी. ए. का परीक्षा-फल निकला तो रामन ने बहुत अच्छे अंक प्राप्त किये। वह अपने विश्वविद्यालय भर में प्रथम आये। खास बात यह थी कि विश्वविद्यालय भर में रामन ही अकेले थे जो प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए थे।

अब क्या था—होने लगी इनामों-पुरस्कारों की बौछार। भौतिक विज्ञान में बहुत बढ़िया अंक लाने के कारण 'अर्णी स्वर्ण पदक' दिया गया। अंग्रेजी के सुन्दर निबंध और उत्तम ज्ञान के कारण भी एक पुरस्कार मिला और विश्वविद्यालय की ओर से भी कई पुरस्कार मिले।

: सात :

अब आया एम. ए. की पढ़ाई का नम्बर।

एम. ए. की पढ़ाई। भारी भरकम पोथे। सुनकर ही कंपकंपी छूटने लगती है। कारण भी कई हैं—एक तो पढ़ाई अपनी मातृभाषा में न होना; दूसरे—विषय को पढ़ाने का विदेशी ढंग और हाजिरी आदि की पाबंदियां।

किन्तु रामन पर न तो कोई ऐसी पाबंदी थी और न उन्हें विदेशी भाषा से ही डर लगता था। अंग्रेजी पर उन्होंने पूरी तरह अधिकार कर लिया था। पढ़ाई के बारे में भी कुछ न पूछो। इस उमर तक उन्होंने विदेशी भौतिक शास्त्र के पण्डितों के ऐसे-ऐसे ग्रन्थ पढ़ डाले थे, जिन्हें लड़के प्रायः सारी उम्र नहीं पढ़ पाते। बी. ए. में जो नामवरी रामन ने हासिल की थी, उससे यह स्पष्ट हो गया था कि पढ़ाई सम्बंधी

कोई पाबंदी उन पर लगानी बेकार है। और जब कक्षा में हाजिर होने न होने की छूट मिल गयी तो इसका यह मतलब नहीं कि रामन को मौज मारने की छूट मिल गयी। नहीं, उन्होंने अपनी इच्छानुसार अपने समय को नये प्रयोग करने और नये-नये उत्तम ग्रन्थ पढ़ने में लगाया। पढ़ने में क्या लगाया, पूरे समय पढ़ने और प्रयोगों में लीन रहने लगे।

एक दिन की बात है—

रामन का एक साथी आवाज के सम्बंध में कुछ प्रयोग कर रहा था। उसे कुछ संदेह हुआ। वह सोचता हुआ अपने अध्यापक श्री जोन्स के पास पहुंचा। पर जोन्स महोदय उस समय उस शंका का समाधान न कर पाये। रामन को पता चला। वह सोचने लगे। वह सोचते रहे, सोचते रहे और शब्द विज्ञान पर एक वैज्ञानिक, जिनका नाम लार्ड रेले है, की खोज को पढ़ने के बाद शंका का एक नया ही समाधान निकाल लिया। मजा यह कि पुराने तरीके की बजाय रामन का यह नया तरीका अधिक अच्छा था। और जब लार्ड रेले को इस बात का पता चला तो उन्होंने रामन की बड़ी प्रशंसा की और बधाई का संदेश भेजा।

प्रोफेसर जोन्स भी इस बात से बड़े प्रसन्न हुए।

उन्होंने रामन से कहा कि वह अपने इस प्रयोग के संबंध में एक अच्छा खोजपूर्ण निबंध लिखें। रामन ने खूब मेहनत करके लेख लिखा और उसे देखने के लिए अपने उन्हीं अध्यापक श्री जोन्स महोदय को दे दिया।

रामन : युवावस्था में

पर जोन्स महोदय महीनों उसे अपने पास रखे रहे। लौटाने का या कुछ सुझाव देने का नाम तक न लिया। इस पर रामन ने उसे दुबारा लिखने का बहाना बनाकर मांगा और छपने के लिए लंदन की विज्ञान सम्बंधी प्रसिद्ध पत्रिका 'फिलासफिकल मैगजीन' के लिए भेज दिया। कारण यह कि भारत में ऐसा कोई पत्र न था जो इस विषय का लेख छापता।

क्या लेख लंदन की पत्रिका में छपा?

हां, संपादक ने उसे स्वीकार कर लिया और कुछ

दिन बाद उसका प्रूफ संशोधन के लिए रामन के पास भेजा।

प्रूफ लेकर रामन अपने उन्हीं पुराने अध्यापक श्री जोन्स के पास पहुँचे। जोन्स भौचक्के रह गये। मन ही मन कुछ अप्रसन्न भी हुए। भौचक्के इसलिए कि इस लड़के का लेख इतनी प्रसिद्ध पत्रिका ने बिना किसी सिफारिश के स्वीकार कर लिया था, और अप्रसन्न इसलिए कि लेख उनसे पूछे बिना ही छपने के लिए भेज दिया गया था।

परन्तु जब रामन ने बताया कि लेख को पहले आपको ही देखने के लिए दिया था और जब महीनों बार-बार पूछने पर भी आपने कुछ न कहा तो मैंने समझ लिया कि आप मेरे विचारों से सहमत हैं। यही सोचकर मैंने लेख प्रकाशनार्थ भेज दिया।

रामन की इस सरलता से प्रोफेसर साहब को तसल्ली हुई और उन्होंने इस बार जल्द ही उस लेख का प्रूफ पढ़कर लौटा दिया।

यह लेख सन् १९०६ की नवम्बर महीने की 'फिलासफिकल मैगजीन आफ लंडन' में तुम आज भी देख सकते हो।

रामन एक बार 'प्रिज्म' का परीक्षण कर रहे थे कि एक खास तरह की रोशनी का पता चला। इस सम्बंध में भी उन्होंने एक लेख लिखा। यह लेख भी एक प्रसिद्ध विलायती पत्रिका 'नेचर' में प्रकाशित हुआ।

ऐसी सुन्दर खोजें करते हुए रामन ने जनवरी १९०७ में एम. ए. पास किया। वह भी साधारण रूप से नहीं; अब तक भौतिक विज्ञान के विद्यार्थियों ने अधिक से अधिक जितने नम्बर लिये थे, उनसे कहीं ज्यादा लेकर। पूरे मद्रास विश्वविद्यालय में उनका स्थान सबसे ऊंचा रहा।

: आठ :

विदेशियों का शासन और विदेशियों की गुलामी। यह गुलामी हम भारतीयों पर बहुत अरसे तक अपना असर डाले रही।

आज हम आजाद हो चुके हैं, पर आज भी हम इसके असर से पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाये। मानसिक दासता की बेड़ियों में हम आज भी बुरी तरह जकड़े हुए हैं।

रामन के सामने भी यही बात आई। एम. ए. कर लिया। अब इनके रिश्तेदारों ने यह सोचा कि भौतिक विज्ञान में और आगे अध्ययन करने के लिए इंगलैण्ड भेजा जाय, क्योंकि इगलैण्ड की मुहर लगे बिना न तो आदमी बहुत बड़ा विद्वान माना जा सकता था, न उसे उसके योग्य बड़ी और अच्छी नौकरी ही मिल सकती थी। खैर, अध्यापकों और सम्बंधियों के यत्न से सरकारी अधिकारी इस बात पर सहमत हो गये कि इन्हें वजीफा

देकर पढ़ने के लिए इंगलैण्ड भेजा जाय। पर इतने से ही काम नहीं चलने का था—इसके लिए कुछ और बातें भी जरूरी थीं। इनमें से एक बात यह थी कि अच्छी सेहत होने का डाक्टरी सार्टिफिकेट लिया जाय। सबका विचार था कि यह काम बड़ी आसानी से हो जायगा, पर गाड़ी यहीं अटक गयी।

एक यूरोपियन डाक्टर ने इनके स्वास्थ्य की जांच की और अपना भारी-भरकम सिर हिलाते हुए कहा: नहीं, मैं तुम्हें विलायत जाने की इजाजत नहीं दे सकता। न तो तुम समुद्री यात्रा के काबिल हो और न इगलैण्ड की सर्दी बरदाश्त कर पाओगे।

असल में बात यह थी कि रामन ने कभी अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान नहीं दिया था। वह तो दिन भर पढ़ने और नये-नये प्रयोग करने में ही लगे रहते थे। उन्हें न तो खाने-पीने की सुध रहती थी और न सोने-उठने की। फल यह हुआ कि शरीर की ओर ध्यान न दिया जा सका और वह कमजोर होता चला गया।

डाक्टर के मना कर देने पर रामन के सम्बंधी बड़े परेशान हुए। पर रामन ने इसकी तनिक भी चिंता न की। उन दिनों एक ही सरकारी महकमा ऐसा था

जिसके कम्पिटीशन वाले इम्तहान भारत में होते थे और जिसके लिए विदेश जाने की जरूरत न थी।

कौन सा महकमा था वह ?

वह था फाइनेन्स का महकमा।

रामन ने जनवरी में एम. ए. का इम्तहान दिया था और फरवरी में ही यह कम्पिटीशन होने वाला था। विषय इसके भले ही भौतिक शास्त्र से कठिन न थे, पर रामन के लिए नये जरूर थे। साहित्य, इतिहास, राजनीति और संस्कृत आदि का अध्ययन आवश्यक था।

यह बात सच है कि कठिनाइयां आदमी का रास्ता नहीं रोक सकतीं। हां, उसमें साहस और लगन की कमी नहीं होनी चाहिए। रामन ने भी निश्चय कर लिया कि इस कम्पिटीशन में बैठूंगा और सफल होकर दिखाऊंगा।

कम्पिटीशन में बैठने में एक दिन बाकी था कि रामन को तार मिला कि एम. ए. की परीक्षा में वह विश्वविद्यालय भर में सर्वप्रथम आये हैं।

अब क्या कहना था ! उनका उत्साह और भी बढ़ गया। मन ही मन सोचा कि जब मैं भौतिक शास्त्र जैसे कठिन विषय में इतने अधिक नम्बर ला सकता हूं तो, प्रयत्न करू तो, फाइनेन्स विभाग की इस प्रतियोगिता में भी सर्वप्रथम आऊँगा। और यह विश्वास ही उन्हें इसमें

भी सर्वप्रथम लाया। उन्नीस वर्ष से कम उम्र में ही रामन भारत सरकार के फाइनेन्स विभाग में डिप्टी डाइरेक्टर जनरल के पद पर पहुंच गये।

जानते हो उन्हें कहां भेजा गया ? उन्हें भेजा गया कलकत्ता, जून १९०७ में। कहां से चले थे, किधर को चले थे—और जा पहुंचे कहां ! पर क्या यह लाचारी थी या बेबसी—या फिर हमारे खोखले समाज का दोष ? खैर जो कुछ भी हो, इन्सान एक बार उनके आगे सिर झुकाकर भी बाद में अपनी राह निकाल ही लेता है।

लड़का नौकरी पर लगा नहीं कि मां-बाप को उसके विवाह की चिन्ता सताने लगती है। दक्षिण भारत में तो विवाह और भी जल्दी कर दिये जाते थे। पर रामन अब तक किसी तरह बचे हुए थे। आखिर कितने दिन बचते।

उनका विवाह हुआ—श्री कृष्णस्वामी अय्यर की पुत्री से। वह मद्रास के समुद्री विभाग में चुंगी के

सुपरिंटेंडेंट थे। खानदान से कुलीन थे। रामन की इनकी बराबरी न थी। पर कृष्णस्वामी की पत्नी ने होनहार रामन को ही अपना भावी दामाद मान लिया था, और जब रामन को अच्छी नौकरी मिल गयी तो श्री अय्यर उनसे अपनी पुत्री का विवाह करने को राजी हो गये।

पर श्री अय्यर का राजी होना ही काफी न था, कट्टरपन्थी ब्राह्मणों ने विवाह का विरोध किया और उसमें सम्मिलित नहीं हुए। किन्तु किसी ने उनके विरोध की चिन्ता न की और सुधार चाहने वाले बड़े-बड़े लोगों ने विवाह में शामिल होकर वर-वधू को आशीर्वाद दिया।

: नौ :

नौकरी भी बढ़िया सी लग गयी और अच्छी पत्नी भी मिल गयी। अब और क्या चाहिए! बहुधा दुनिया के लोग यह सब पाकर ही संतोष कर लेते हैं। फिर सारी उमर और न कुछ सोचते हैं और न करते हैं। दफ्तर से घर और घर से दफ्तर—बस यही बेमतलब की चक्की।

पर रामन ये दोनों चीजें पाकर भा प्रसन्न नहीं थे। उन्हें तो जिस चीज की तलाश थी, जो उन्हें भाती थी, वह अब तक न मिली थी। इसी से वह प्रायः उदास रहते थे।

किन्तु, जैसा पहले कह चुका हूं, जिन खोजा तिन पाइयां।

वह एक दिन अपने दफ्तर के बाद ट्राम से स्यालदा अपने घर जा रहे थे कि उन्होंने रास्ते में 'भारतीय विज्ञान परिषद' का बोर्ड देखा और घर की सुध-बुध

भूल वहीं उतर पड़े। सीधे जा पहुंचे उस विज्ञान परिषद के भवन में।

सौभाग्य से उस समय परिषद की बैठक हो रही थी और सर आसुतोष मुखर्जी जैसे विद्वान वहां मौजूद थे। रामन ने उस समय तो केवल मंत्री से ही भेंट की और समय पर जाकर उन्हें विदेशी पत्रिकाओं में प्रकाशित विज्ञान सम्बंधी अपने मौलिक लेख दिखाये। इन लेखों को देखकर मंत्री महोदय मुग्ध हो उठे।

अनायास रामन जैसा होनहार वैज्ञानिक पाकर परिषद धन्य हो उठी। रामन भी अपने आपको अतीव भाग्यशाली मानने लगे। आखिर मन की साध पूरी हुई।

अब क्या था! जब भी समय मिलता वह परिषद में जाकर नये-नये परीक्षण करने लगते। इतनी बड़ी नौकरी पर न आराम और न अफसरी बू। इसी लगन और खोज का परिणाम था कि परिषद में पूरे साधन न होते हुए भी रामन ने कई आश्चर्यजनक आविष्कार किये—जिनसे उनकी ख्याति भारत से बाहर, इंगलैण्ड और अमरीका तक पहुंची और वहां के लोग भी इस भारतीय वैज्ञानिक का लोहा मानने लगे। कलकत्ता के प्रमुख वैज्ञानिक सर आसुतोष मुखर्जी और सर गुरुदास बनर्जी तो इनको अपने पुत्र की तरह प्यार करते थे।

पर यह सिलसिला अधिक दिनों तक न चल पाया और इनकी बदली रंगून को हो गयी। परिषद् छूट गयी। हां, विज्ञान का मोह न छूटा। रंगून में नये-नये प्रयोग और खोज करने का मौका न मिलता। हां, विज्ञान सम्बंधी किताबों को पढ़ते रहते।

विज्ञान सम्बंधी बातों से तो रामन को इतना लगाव था कि इनके आगे वह दूसरी सब चीजें भूल जाते और किसी बात की परवाह न करते।

बात रंगून की है। एक दिन उन्हें पता चला कि पास के किसी स्थान के स्कूल की प्रयोगशाला के लिए साइंस की नयी-नयी चीजें आयी हैं। इस समाचार ने रामन को बेचैन कर दिया। उनके मन में इन्हें देखने की इच्छा जाग उठी। और आखिर अपनी पत्नी को बिना कोई सूचना दिये ही वह आधी रात को घर से निकल पड़े और भोर होते-होते चीजें देखकर लौट आये।

रंगून के दिनों इनके पिता की मृत्यु हुई। तब रामन छः महीने की छुट्टी लेकर मद्रास आये। यहां आकर भी वह विज्ञान से विमुख न हुए। प्रेसिडेन्सी कालेज की प्रयोगशाला में वह दिन-दिन भर प्रयोग करते रहते।

छुट्टियों के बाद उनका नागपुर को तबादला हो गया।

यहां उन्होंने अपने घर पर ही प्रयोगशाला बनायी और उसमें काम करते रहे। शायद कुछ लोग यह समझें कि वैज्ञानिक, दार्शनिक अथवा कवि लोग लापरवाह होते हैं। पर, कम से कम रामन के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती। मनुष्य का कुछ भी शौक हो, परन्तु जो कार्य उसे सौंपा गया हो, उसे बखूबी करना चाहिए।

हम तुम्हें बता चुके हैं कि रामन अपना काम लगन और मेहनत से पूरा करते थे। यही बात वह अपने साथ काम करने वालों से भी चाहते थे। परिणाम यह हुआ कि साथ वालों को बुरा लगा।

फिर ?

फिर यही कि लोगों ने रामन विरोधी प्रचार शुरू किया और अफसरों से शिकायत की। चोरी और ऊपर से सीनाजोरी इसी को कहते हैं।

पर जब बड़े अफसर ने जांच की तो मामला उल्टा मिला। फल यह हुआ कि रामन के कामों को उन्होंने न सिर्फ ठीक पाया, वरन उनके काम को देखकर दंग रह गये।

अपने आप, बिना मांगे उन्होंने रामन को प्रशंसा-पत्र लिखकर दिया।

जरा सोचो तो, क्या हालत हुई होगी झूठी चुगली करने वालों की !

और इसके बाद रामन को एकाउण्टेण्ट जनरल बना दिया गया और १९११ के नवम्बर महीने में उन्हें कलकत्ते भेजा गया। वर्षों के बाद फिर अपनी बिछुड़ी परिषद् में काम करने का मौका मिला! रामन की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। इस बार रामन ने यहाँ लगभग सात साल काम किया।

इस दौरान रामन ने ढेरों प्रयोग किये और शब्द के सम्बंध में अनेक ग्रन्थ लिख डाले। ध्वनि विज्ञान के वह प्रकाण्ड पण्डित माने जाने लगे।

: दस :

किसी बात के लिए अनुराग इसी बात से झलकता है कि मनुष्य उसके लिए क्या कुर्बानी करता है।

आज भारत के लोग सरकारी नौकरी के लिए मारे-मारे फिरते हैं। परन्तु रामन ने इतनी बढ़िया नौकरी, इतनी अच्छी तनख्वाह और सरकार में इतने मान-सम्मान को विज्ञान के प्रेम पर कुर्बान कर दिया, निछावर कर दिया।

उन दिनों कलकत्ता में सर तारकनाथ पालित, डा. रासबिहारी घोष और सर आसुतोष मुखर्जी जैसे बड़े-बड़े विद्वान व सुधारक थे। विज्ञान के विकास के लिए इन सबने मिलकर कलकत्ते में एक साइंस कालेज खोला। कालेज तो खुल गया पर उन्हें भौतिक विज्ञान पढ़ाने के लिए कोई अच्छा प्रोफेसर दिखायी न दिया। भौतिक विज्ञान पढ़ाये तो कौन? अब श्री मुखर्जी का

ध्यान रामन की ओर गया। पर उनसे बात करने की हिम्मत न हुई।

तुम पूछोगे हिम्मत क्यों नहीं हुई ?

बात यह है कि उनका विचार था कि शायद रामन इतनी अच्छी सरकारी नौकरी छोड़कर साइंस कालेज में आना पसन्द न करें।

पर रामन को उन्होंने अच्छी तरह समझा न था। रामन तो विज्ञान के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को तैयार थे। वह जानते थे कि विदेशी हुकूमत के नीचे सरकारी नौकरी एक चीज है और विज्ञान की सेवा दूसरी चीज; सरकारी नौकरी में रहते हुए मैं विज्ञान की सेवा न कर सकूगा।

उन्हें जब श्री आसुतोष की बात का पता चला तो उन्होंने फौरन सरकारी नौकरी छोड़ दी।

अब एक और दिक्कत सामने थी। दिक्कत यह कि साइंस कालेज में यह आवश्यक समझा जाता था कि जो भी व्यक्ति भौतिक विज्ञान पढ़ाने आये, वह किसी विदेशी अर्थात योरपीय विश्वविद्यालय में पढ़ा हुआ हो और वहां की डिग्री उसे प्राप्त हो। रामन को अभी विदेश जाने का मौका तक नहीं मिला था, डिग्री की बात तो दूर थी।

आज भी हम योरप की डिग्री को बड़ा मानते हैं। पर रामन उस समय भी इस शर्त को अपमानजनक मानते थे। और शर्त अपमानजनक थी भी।

जो भी हो, आखिर रामन पर से यह शर्त हटा ली गयी और जुलाई १९१७ में वह कलकत्ता विश्वविद्यालय में भौतिक विज्ञान के प्रोफेसर बन गये।

अब क्या था। रामन को मनचाहा काम मिल गया। वह दिन-रात उसी में मगन रहने लगे। और उनकी ख्याति और लगन के कारण भारत भर से विज्ञान के विद्यार्थी खिंच-खिंच कर कलकत्ता आने लगे।

रामन की प्रतिभा और लगन को देखकर ही प्रिंसिपल आर्चीबाल्ड ने कहा था : "किसी विश्वविद्यालय की शोभा उसकी बड़ी-बड़ी आलीशान इमारतें नहीं, वरन वहां पढ़ाने वाले गुरु और पढ़ने वाले शिष्य होते हैं।"

इसके बाद १९२१ में पहली बार वह विदेश गये—कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि के रूप में। लंदन में ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के विश्वविद्यालयों की एक बड़ी सभा होने वाली थी। कलकत्ता विश्वविद्यालय का बड़ा नाम था। रामन विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि चुने गये और लंदन गये। वहां इनकी अपनी नई खोजों के बारे में

इनके भाषण सुनकर लोग दंग रह गये। इसके बाद तो इनके विचार जानने के लिए इन्हें अनेक बार विदेश बुलाया गया। विदेशों में इनका सम्मान होने लगा।

इंगलैण्ड, अमरीका, सोवियत संघ और योरप का शायद ही कोई देश बचा हो जहां रामन न गये हों और जहां की विज्ञान संस्थाओं ने इनका स्वागत न किया हो, इन्हें उपाधियां न दी हों और अपने देश की सबसे उच्च और सम्मानित विज्ञान संस्थाओं का सम्मानित सदस्य इन्हें न चुना हो।

: ग्यारह :

तालाब में लहरें उठती तो सभी ने देखी होंगी !

प्रकाश के सम्बंध में भी बात ऐसी ही है। पर प्रकाश फैलता कैसे है ?

प्रकाश तो वहां भी फैलता है जहां हवा न हो। इसका कारण क्या है ?

पहले लोग कहते थे कि प्रकाश ईथर नामक एक व्यापक पदार्थ के सहारे फैलाता है। पर आज यह बात पुरानी हो गयी। आज उसका कोई महत्व नहीं। कारण यह कि इस सम्बध में और अनेक महत्वपूर्ण खोजें हो चुकी हैं।

रामन की खोजों का मुख्य विषय प्रकाश है। उन्होंने इस संबंध में नये सिद्धान्तों की खोज की और उन्हें सिद्ध करके दिखाया। उन्होंने कहा कि तरल और पारदर्शी वस्तुओं में छितरकर प्रकाश का रंग बदल जाता है।

सिद्धान्त तो उन्होंने खोज निकाला। पर वैज्ञानिकों के सामने इसे सिद्ध करने में उन्हें चार वर्ष लग गये।

१९२८ में इसी को सिद्ध करने के लिए उन्होंने पारे के दीपक का इस्तेमाल किया। इससे यह सिद्ध हो गया कि जब-जब अलग-अलग वस्तुओं द्वारा प्रकाश छितराया जाता है तब-तब परदे पर प्रकाश की रेखाएं भी भिन्न-भिन्न तरह की पड़ती हैं।

प्रकाश का यह रंग-परिवर्तन वैज्ञानिक संसार में 'रामन प्रभाव' के नाम से विख्यात है।

इसी तरह शब्द और ध्वनि के बारे में भी उन्होंने कई नये सिद्धान्त खोज निकाले। इस काम के लिए उन्होंने कई नये यंत्रों का आविष्कार भी किया।

रामन के घर में संगीत के वाद्ययंत्र थे। पिता को उनके बजाने, उनमें रस लेने, का शौक था। रामन को 'ध्वनि' के अध्ययन का शौक पैदा हो चुका था।

रामन ने भारतीय वाद्ययंत्रों—वीणा, मृदंग और तबला आदि की ध्वनियों का बारीकी से अध्ययन किया। उनके बारे में सोचा, अनुशीलन किया और अनेक परीक्षण किये।

बरसात में इंद्रधनुष तुमने देखा ही होगा !

रामन ने हलके बादलों से पैदा होने वाले रंगों और इंद्रधनुष के रंगों की भी जांच की। उन्होंने बताया

कि प्रकाश तरल और पारदर्शक चीजों में से गुजरकर ही छितराया नहीं जाता, वरन् स्फटिक जैसे ठोस पदार्थों में से भी अणुओं की गति के कारण प्रतिक्षिप्त होता है।

आज का युग परमाणु-युग है और परमाणु के

श्यामपट पर विषय को समझाते हुए रामन

सम्बंध में अनेक खोजें हो रही हैं। श्री रामन के सिद्धान्तों से इसमें और भी आसानी होगी। किसी भी पदार्थ के अणुओं की गणना कर सकना सम्भव होगा। इस तरह उस पदार्थ की बनावट का वास्तविक ज्ञान हो सकेगा।

रामन की खोज 'रामन प्रभाव' का इतना सम्मान हुआ कि १९३० में इन्हें सर्वोत्तम वैज्ञानिक खोज पर मिलनेवाला संसार भर में सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार—नोबल पुरस्कार—मिला। एशिया भर में किसी को भौतिक विज्ञान पर पुरस्कार मिलने का यह पहला अवसर था।

: बारह :

रामन प्रभाव की भी एक कहानी है।

सभी बड़े या महान कामों की तह में कोई न कोई खास बात होती ही है।

कहते हैं कि १९२५ में, पुरस्कार मिलने से ५ वर्ष पूर्व, जब वह प्रकाश के सम्बंध में खोज कर ही रहे थे तो उन्हें इतना आत्म-विश्वास हो गया था कि सच-मुच वह कोई अद्‌भुत कार्य कर रहे हैं। इसी आत्म-विश्वास के कारण सम्भवतः उनके दिल ने ऐसा कहने को विवश कर दिया हो; उन्होंने अपने साथियों से कह दिया था : "मुझे विश्वास है कि ५ साल बाद मेरे इस आविष्कार पर नोबल पुरस्कार मिलेगा।"

जिनके आंखें होती हैं और मन में किसी काम को करने की उमंग और चाह होती है, उन्हें साधारण-सी दीखने वाली चीज भी गंभीर चिन्तन की सामग्री दे देती है। अभी मैंने न्यूटन का जिक्र किया था। संसार का यह

महान वैज्ञानिक अपने बगीचे में बैठा कुछ सोच रहा था कि एक सेव आकर उसके पास गिरा। हम और तुम सदा ऐसी अनेक बातें देखते हैं, पर हमारे पास शायद न वैसी आंखें हैं और न मन में वैसी उमंग। सचमुच ही हम आंखों वाले अंधे हैं। सेव का गिरना देख न्यूटन बेचैन हो उठे और सचमुच उन्हें तब तक शान्ति नहीं मिली जब तक उन्होंने उस सेव के धरती पर गिरने के कारण को खोज नहीं निकाला।

इसी प्रकार १९२१ में रामन जब विदेश गये तो भूमध्य सागर में उनका जहाज जा रहा था। रामन डैक पर खड़े थे। उनकी नजर पानी पर पड़ी और वहीं अटक कर रह गयी।

अटक कर?

हां, पर वहां कोई मगरमच्छ नहीं था; कोई ह्वेल या नर ह्वेल भी नहीं।

वहां थीं पानी की तरंगें और उनका गहरा नीला रंग।

रामन ने सोचा : क्या बात है कि बंगाल की खाड़ी का पानी गहरे नीले रंग का नहीं; वह सफेदी-मायल है और यह इतना नीला। पानी दोनों का है समुद्र का ही।

सात साल रामन ने ये रहस्यमयी गुत्थियां सुलझाने में लगा दिये और अन्त में वे ही निर्णय 'रामन प्रभाव' के नाम से विख्यात हुए। इनके प्रकाशित होने के बाद तो संसार भर के वैज्ञानिकों का ध्यान उधर गया और कुछ ही दिनों में ६०० से अधिक वैज्ञानिकों ने इस सम्बंध में और खोजें कीं।

संसार प्रसिद्ध नोबल पुरस्कार मिलने के बाद तो रामन पर सम्मानों, पुरस्कारों, और डिग्रियों की बौछार होने लगी। ब्रिटिश सरकार ने १९२९ में 'सर' का खिताब देकर सम्मानित किया। अनेक स्थानों से उन्हें डाक्टरेट की उपाधियां मिलीं।

इतना सब तो हुआ, पर रामन उस परोपकारी पेड़ की ही तरह बने रहे जो अधिक फल लद जाने पर मस्तक झुकाता ही जाता है। अपने सम्मान और पुरस्कारों में रामन अपने आपको खो नहीं बैठे। उनमें अहंकार नहीं जागा, बल्कि उन्होंने कहा : मैं तो विज्ञान में खोज का काम आरम्भ ही कर रहा हूं।

नयी खोजें और इसके बाद मिलने वाला इतना महान सम्मान और उसके मुकाबले रामन की नम्रता। सचमुच अनोखी चीजें हैं।

कितने लोग प्रलोभनों में बहने से बच पाते हैं?

: तेरह :

रामन भारत के सपूत हैं। उन्होंने अपने कामों से संसार का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है और अपने देश का नाम उज्ज्वल किया है। १९३० में उन्होंने नोबल पुरस्कार प्राप्त करके संसार की नजरों में भारत का सम्मान बढ़ाया और लोगों के दिल में यह बात बैठा दी कि भारत में भी ऐसे व्यक्ति हैं जिनके लिए विज्ञान दुरूह चीज नहीं है। वे भी महान् और शानदार काम कर सकते हैं।

१९३३ में उन्होंने बंगलौर स्थित इंडियन इंस्टीट्यूट का भार संभाला जिसे विकसित करके आज को सम्मानित स्थिति में ला दिया।

पिछले एक-दो साल पहले संसार के एक और महान देश ने उनके कार्यों की सराहना की और उस बात की ओर संसार का ध्यान खींचा, जिसकी ओर

अब तक किसी का ध्यान नहीं गया था। यह काम था रामन के शान्ति के लिए प्रयास।

और आज दुनिया ने शांति की महानता को समझा है।

शान्ति पुरस्कार विजेता

पिछली दो बड़ी लड़ाइयां यह सिद्ध कर चुकी हैं कि उनसे संसार की समस्याएं सुलझती नहीं, उलझती हैं। और राजनीतिज्ञों के दबाव में आकर वैज्ञानिकों ने संसार को ऐसे-ऐसे हथियार दिये जिनसे संसार में कुछ

ही देर में मौत का सन्नाटा छा जाय। संसार के अनेक महान वैज्ञानिकों ने अनेक ऐसी खोजें की हैं और अनेक ऐसे कार्य किये हैं जिनके कारण विज्ञान मानव के लिए अभिशाप बन गया है। इससे मानव का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है।

पर रामन! हमारे देश के इस महान वैज्ञानिक ने आज तक ऐसा कोई भी कार्य नहीं किया जिससे संसार की शान्ति भंग होने में जरा भी सहायता मिलती हो। आज तक वह इस बात के लिए दृढ़ हैं कि वैज्ञानिकों को ऐसे कार्यों से बचना चाहिए जिनसे संसार की शान्ति भंग होती हो।

इसीलिए रूस की सरकार ने उन्हें 'राष्ट्रों के बीच शान्ति को स्थिर रखने के लिए' लेनिन पुरस्कार दिया।

रामन अपने क्षेत्र में एक तपस्वी की तरह लगे रहे। यह एक और बड़ी विजय थी, जिसे आज के एक और महान शक्तिशाली देश ने समझा—जिसके हाथ में संसार की शांति का पलड़ा है।

रामन को नोबल पुरस्कार उनकी नयी खोज 'रामन प्रभाव' के लिए मिला था। पर लेनिन पुरस्कार का सम्मान उन्हें किन कारणों से मिला, इसके बारे में उनकी अपनी बात सुनिए। वह कहते हैं :

"लेनिन पुरस्कार के लिए सबसे पहले मुझे इसलिए चुना गया कि मैं विज्ञान के क्षेत्र में काम करता हूँ। पर इससे भी महत्व की बात यह है कि मैंने अपने ज्ञान का प्रयोग कभी भी फौजी कामों के लिए नहीं किया। मैंने सदा इस बात का विरोध किया है कि रचनात्मक कामों के बजाय और कहीं विज्ञान का दुरुपयोग हो।"

रामन के अनुसार उन्हें लेनिन पुरस्कार मिलने का एक कारण यह भी है कि उनकी मातृ-भूमि भारत ने सदा दृढ़तापूर्वक और खुले शब्दों में शान्ति का पक्ष लिया है।

: चौदह :

एक और महत्वपूर्ण खोज :

दुनिया बड़ी रंग-बिरंगी है। कहीं लाल, नीले, पीले, गुलाबी फूल हैं, कहीं मखमली हरे मैदान, तो कहीं दूसरे रंगीन नजारे सौन्दर्य बिखेर कर आपका मन बहलाने को उतावले दीखते हैं। सच तो यह है कि हम खुद इस रंग-बिरंगी प्रकृति के पुत्र हैं। इसलिए हम भी देखा-देखी अपने कपड़े, अपने घरों और दरो-दीवार को प्रकृति के ही रंगों में रंगते हैं।

तो क्या ये सब रंग और रंगीन नजारे बेकार हैं? नहीं, ऐसी बात नहीं। उनका हमारे जीवन से घनिष्ट सम्बंध है। क्या आपने कभी सोचा कि हम रंगों को कैसे देखते हैं? अपने चारों ओर के प्रकाश और उसमें दिखाई देनेवाली चीजों को कैसे देखते हैं?

डॉ. रामन ने इस सम्बंध में खोज की है। उन्होंने इन प्रश्नों को तीन भागों में बांटा है—एक का सम्बंध

भौतिक विज्ञान से है, दूसरे का शरीर विज्ञान और तीसरे का सम्बंध मानव मस्तिष्क से है। उनका कहना है कि अक्सर लोग आंख और कैमरे की तुलना करते हैं। वे कहते हैं कि आंख और कैमरे की कई बातें भले ही समान हों परन्तु मूलतः उनके काम भिन्न-भिन्न हैं। इस प्रकार दोनों को तुलना संदेह और भ्रम में डालने वाली है। कारण यह कि कैमरे के द्वारा प्रकाश में दिखाई देने वाले पदार्थ का हम रूप उतारते हैं और उसकी प्रतिलिपि कागज पर सुरक्षित रख लेते हैं। आंख का कैमरा—जिसे हम वैज्ञानिकों के शब्दों में 'रैटिना' (Retina) कहते हैं, दोनों ही काम करता है : वह प्रकाश के रूप में शक्ति को ग्रहण भी करता है और फिर प्रत्याक्षेपित भी करता है, अर्थात् उस रंग की अनुभूति हमारे मस्तिष्क सम्बंधी तंतुओं द्वारा होती है। जहां कैमरे की फिल्म का उपयोग एक ही बार हो सकता है वहां हमारी आंख का कैमरा क्षण-क्षण में अनेक चित्र उतारता और उनके रंग-रूप की अनुभूति हमें करवाता रहता है। रैटिना को—अर्थात् आंख के अन्दर के भाग को देखने से रंगों की उपलब्धि यानी ज्ञान के सम्बंध में और भी पता चलता है।

डॉ. रामन ने अभी कुछ समय पूर्व रैटिना को

देखने की नई पद्धति का आविष्कार किया है। रैटिना को देखने के लिए हेलमोल्ज ने एक यंत्र का आविष्कार किया था। उसे ओप्थेलमोस्कोप (Opthalmoscope) कहते हैं। डॉ. रामन ने ऐसा अद्भुत आविष्कार किया है कि प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी यंत्र की सहायता के देख सकता है कि उसकी आंख के अन्दर का हिस्सा कैसा है और वह कैसे काम करता है।

यह तरीका बहुत ही सरल और सीधा है। डॉ. रामन कहते हैं कि एक अच्छे प्रकाश-युक्त कमरे में बैठ कर सामने के सफेद पर्दे की ओर देखो। एक आंख बंद रखो और कलर-फिल्टर को अपनी आंख के पास रखो। उनका कहना है कि पर्दे की ओर काफी देर देखने से जब दर्शक की दृष्टि कलर-फिल्टर से प्रभावित हो जाय तो फिल्टर को फौरन एक ओर हटा दिया जाय। तब सामने के सफेद पर्दे पर रैटिना का बड़ा सा प्रतिबिम्ब दीखने लगेगा। सिर्फ रैटिना ही नहीं वरन् उसके महत्वपूर्ण केन्द्रीय भाग भी सामने के पर्दे पर सजीव होते दीख पड़ेंगे।

डॉ. रामन यहीं बस नहीं करते। उनके नये आविष्कार से यह भी पता चलता है कि रैटिना में तीन अंग (Pigment) हैं। इन्हीं तीनों की सहायता से हमें

अनेक प्रकार के रंगों के ज्ञान की उपलब्धि होती है। इनमें से एक जामुनी रंग से लेकर अत्यधिक गहरे लाल को देखता है, दूसरा हरे और हरे-पीले रंग की अनुभूति करवाता है और तीसरा लाल का ज्ञान कराता है।

इसके साथ ही डॉक्टर रामन ने यह भी खोज निकाला है कि ये 'पिगमैण्ट' कैसे काम करते हैं और आंख अलग-अलग रंगों को इतनी जल्दी कैसे देखती और पहचानती है।

आज रामन की आयु ७५ वर्ष से अधिक है। पर काम करने का उनका उत्साह आज भी युवकों जैसा है। दरअसल वह काम और आराम के बीच भेद नहीं करते। अपने खोज के कामों में वह लगातार लगे रहते हैं।

कलकत्ता के साइंस कालेज के बाद वह सरकार के अनुरोध पर बंगलौर की अनुसंधानशाला में काम करने लगे। इसके बाद तो उन्होंने अपनी लाखों की सम्पत्ति और सारी आय बंगलौर की 'रामन अनुसंधानशाला' को सौंप दी। उनकी इस नई खोज से संसार के महानतम वैज्ञानिकों का ध्यान फिर रामन अनुसंधानशाला की ओर खिंच गया है।

डॉ. सी. वी. रामन अभी स्वस्थ हैं और बंगलौर स्थित अनुसंधानशाला में—जो आज संसार के वैज्ञानिकों के लिए तीर्थ स्थान बन गयी है—युवकों की तरह अध्ययन और खोज में लगे रहते हैं। आज उनका तन, मन, धन—सभी कुछ इसी अनुसंधानशाला को अर्पित है। विज्ञान और देश के भावी वैज्ञानिकों के लिए अपने प्रेम का इससे बढ़िया सबूत और क्या हो सकता है ? सच ही है :

परोपकाराय सतां विभूतयः !

तिथि पत्रिका

नाम : चन्द्रशेखर वेंकट रामन।

जन्म : त्रिचनापल्ली; ७ नवम्बर, १८८८।

प्रारम्भिक शिक्षा : चार से १४ वर्ष की आयु तक विजगापट्टम में।

१९०३ : जनवरी। प्रेसीडेंसी कालेज मद्रास में भर्ती हुए।

१९०४ : बी. ए. की परीक्षा पास की। भौतिकी में स्वर्ण पदक प्राप्त किया।

१९०६ : नवम्बर। लन्दन की 'फिलासफिकल मैगजीन' में लेख प्रकाशित हुआ।

१९०७ : जनवरी। एम. ए. पास किया। सबसे ऊंचे नम्बर प्राप्त किये।
—फरवरी। फिनान्स विभाग की कम्पिटीटिव परीक्षा में प्रथम उत्तीर्ण हुए।
—जून। कलकत्ते में असिस्टेंट एकाउंटेंट जनरल के पद पर नियुक्ति।

१९१७ : जुलाई। सरकारी नौकरी से त्याग-पत्र। कलकत्ता विश्वविद्यालय में भौतिकी के 'पालित' प्रोफेसर नियुक्त हुए।

१९१९ : विज्ञान के विकास के उद्देश्य से बनायी गयी संस्था 'इंडियन एसोसियेशन फॉर दि कल्टिवेशन ऑव साइन्स' के मंत्री चुने गये।

१९२१ : ऑक्सफोर्ड में आयोजित 'यूनिवर्सिटीज कांग्रेस' में भाग लेने के लिए कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि के रूप में भेजे गये ।

१९२४ : लन्दन की रॉयल सोसायटी के सदस्य बने ।

१९२५ : सोवियत सघ की विज्ञान अकादमी के समारोह में भाग लिया ।

१९२९ : ब्रिटिश सरकार की ओर से 'सर' की उपाधि मिली ।

१९३० : नोबल पुरस्कार जीता ।
—लंदन की रॉयल सोसायटी ने ह्यूग्स मेडल भेंट किया ।
—ग्लासगो विश्वविद्यालय से एल. एल. डी. की उपाधि ।

१९३२ : पेरिस विश्वविद्यालय ने एस. डी. की उपाधि दी ।

१९३७ : 'इंटरनेशन कांग्रेस ऑव फिजिक्स' में भाग लेने के लिए पेरिस और बोलोन की यात्रा की ।

१९५८ : राष्ट्रों के बीच मैत्री को विकसित करने के उपलक्ष में सोवियत संघ की ओर से लेनिन शांति पुरस्कार मिला ।

१९६० : १० जुलाई १९६० को रंगों को देखने के सम्बंध में नवीनतम खोज प्रकाशित ।

✦